शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No- 12-20
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. अपराजिता जॉय नंदी
सहायक प्राध्यापक (हिंदी),
श्री शंकराचार्य इंस्टिट्यूट ऑफ़ प्रोफेशनल स्टडीज, रायपुर (छत्तीसगढ़).

Corresponding Author :

डॉ. अपराजिता जॉय नंदी
सहायक प्राध्यापक (हिंदी),
श्री शंकराचार्य इंस्टिट्यूट ऑफ़ प्रोफेशनल स्टडीज, रायपुर (छत्तीसगढ़).

हिन्दी में जीवनी लेखन की परंपरा और 'आवारा मसीहा' का साहित्यिक महत्व

सार : हिन्दी जीवनी का आरंभ पौराणिक चरितों, महापुरुषों के आख्यानों और भक्तिकालीन जीवनियों से हुआ, जहाँ उद्देश्य मुख्यतः प्रेरणा, आदर्श और चरित्र-निर्माण था। आधुनिक काल में जीवनी लेखन अधिक शोधपरक, वास्तविकतामूलक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध हुआ। इसी क्रम में जीवनी ने साहित्य और इतिहास के मध्य सेतु का कार्य करना प्रारंभ किया। 'आवारा मसीहा' (लेखक: विष्णु प्रभाकर) हिन्दी जीवनी साहित्य की उन कृतियों में है जिन्होंने इस विधा को व्यापक पाठक-समुदाय तक पहुँचाया और इसे लोकप्रियता के साथ साहित्यिक गरिमा भी प्रदान की। यह कृति बांग्ला के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार **शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय** के जीवन पर आधारित है। विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र के जीवन को केवल घटनाओं के क्रम के रूप में नहीं, बल्कि उनकी संवेदनशीलता, संघर्षशीलता, सामाजिक विद्रोह, गरीबी, मानवीय करुणा तथा साहित्यिक चेतना के एक समग्र दस्तावेज़ के रूप में प्रस्तुत किया है। यह जीवनी शरतचन्द्र की रचनाओं और उनके निजी जीवन के अंतर्द्वंद्वों के बीच एक जीवंत संबंध स्थापित करती है, जो आधुनिक जीवनी की मूल अपेक्षाओं को पूरा करती है। यह शोध-पत्र हिन्दी में जीवनी लेखन की परंपरा और उसके विकास का विश्लेषण करता है, साथ ही विशिष्ट रूप से 'आवारा मसीहा' के साहित्यिक महत्त्व को केन्द्र में रखता है।

मुख्य शब्द : हिन्दी जीवनी परंपरा, आधुनिक जीवनी लेखन, शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय, आवारा मसीहा, जीवनी का साहित्यिक मूल्य, मनो-वैज्ञानिक जीवनी, सामाजिक यथार्थ, शोध-प्रधान जीवनी, साहित्यिक विश्लेषण।

प्रस्तावना : हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन की परंपरा एक दीर्घ, सघन और बहुआयामी विकास-यात्रा का परिणाम है, जिसमें भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक स्मृति, ऐतिहासिक चेतना और मानवीय संवेदना समाहित रही है। जीवनी लेखन का उद्देश्य केवल किसी व्यक्ति के जीवन की घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करना नहीं है, बल्कि

उसके व्यक्तित्व, वैचारिक संरचना, सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश और जीवन-संघर्षों को साहित्यिक अभिव्यक्ति देना भी है। इसी संदर्भ में यह स्वीकार किया गया है कि **"जीवनी किसी व्यक्ति के जीवन की घटनाओं का मात्र क्रमबद्ध विवरण नहीं है, बल्कि उसके जीवन-संघर्ष, विचार और सामाजिक परिवेश की समग्र अभिव्यक्ति है।"**[1] इस दृष्टि से जीवनी इतिहास और साहित्य के बीच एक सेतु का कार्य करती है। जब जीवन-कथा में संवेदना और यथार्थ का संतुलन स्थापित हो जाता है, तब जीवनी केवल ऐतिहासिक दस्तावेज़ न रहकर साहित्यिक कृति बन जाती है। इस संदर्भ में यह कथन अत्यंत सार्थक है कि **"जब जीवन-कथा में संवेदना और यथार्थ का समन्वय होता है, तब जीवनी इतिहास नहीं, साहित्य बन जाती है।"**[2] भारतीय साहित्य परंपरा में जीवनी लेखन का आरंभ धार्मिक, पौराणिक और आदर्शवादी चरित्रों से माना जाता है। 'चरित' परंपरा, महाकाव्य, पुराण और भक्तिकालीन जीवनियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि व्यक्ति का जीवन भारतीय साहित्य में सदैव महत्वपूर्ण रहा है। इन प्रारंभिक जीवनियों का उद्देश्य नैतिक आदर्शों की स्थापना और प्रेरणा प्रदान करना था। यद्यपि इनमें आधुनिक अर्थों में ऐतिहासिक प्रामाणिकता और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का अभाव था, फिर भी इन्होंने व्यक्ति-केंद्रित लेखन की सशक्त नींव रखी। मध्यकाल में संत-भक्तों के जीवन-वृत्तों ने जीवनी को आध्यात्मिक और भावात्मक गहराई प्रदान की तथा लोक-जीवन और सामाजिक चेतना को उससे जोड़ा।

आधुनिक काल में प्रवेश के साथ इसी हिन्दी जीवनी लेखन में गुणात्मक परिवर्तन दिखाई देता है। नवजागरण, आधुनिक शिक्षा, मुद्रण-प्रणाली और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रभाव से जीवनी लेखन अधिक यथार्थपरक, शोध-प्रधान और विश्लेषणात्मक बनता गया। अब व्यक्ति को केवल आदर्श पुरुष के रूप में नहीं, बल्कि अपने समय की सामाजिक, आर्थिक और मानसिक चुनौतियों से जूझते हुए एक जीवंत मनुष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। इस परिवर्तन ने जीवनी को एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में प्रतिष्ठित किया, जिसमें मनोवैज्ञानिक अध्ययन, सामाजिक संदर्भ और ऐतिहासिक चेतना का समन्वय स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। **"आधुनिक आलोचना जीवनी को केवल सहायक विधा नहीं, बल्कि स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में स्वीकार करती है।"**[3] इसी विकास-क्रम की परंपरा में विष्णु प्रभाकर द्वारा रचित **'आवारा मसीहा'** हिन्दी जीवनी साहित्य की एक अत्यंत उल्लेखनीय कृति के रूप में प्रतिष्ठित है। यह जीवनी बांग्ला साहित्य के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित है, जिनका साहित्य संवेदना, करुणा, संघर्षशीलता और सामाजिक विद्रोह के कारण विशिष्ट स्थान रखता है। '**आवारा मसीहा'** में विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र के जीवन की विभिन्न परिस्थितियों आर्थिक अभाव, पारिवारिक संघर्ष, सामाजिक रुढ़ियों के विरुद्ध उनका प्रतिरोध तथा मानवीय पीड़ा के प्रति उनकी संवेदनशील प्रवृत्ति को अत्यंत संतुलित और शोध-सम्मत ढंग से प्रस्तुत किया है। कृति की भाषा-शैली, कथात्मक प्रवाह, संदर्भ-निर्माण और चरित्र-विश्लेषण इसे आधुनिक हिन्दी जीवनी के श्रेष्ठ उदाहरणों में सम्मिलित करते हैं।यह यह कथन बिलकुल सठिक है कि **"विष्णु प्रभाकर के लिए जीवनी लेखन केवल जीवन-विवरण नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर छिपे संघर्षों की पहचान है।"**[4]

यद्यपि हिन्दी जीवनी परंपरा और **'आवारा मसीहा'** दोनों विषयों पर पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है, फिर भी कुछ महत्त्वपूर्ण शोध-अंतर स्पष्ट रूप से विद्यमान हैं। हिन्दी जीवनी परंपरा पर उपलब्ध शोध प्रायः खंडित रूप में मिलता है, जिससे इसके प्राचीन से आधुनिक काल तक के विकास का समग्र और तुलनात्मक अध्ययन अधूरा रह जाता है। इसी प्रकार **आवारा मसीहा'** पर किए गए कार्यों में इसकी लोकप्रियता और भावनात्मक प्रभाव का उल्लेख तो मिलता है, परंतु इसकी साहित्यिक संरचना, उपन्यासात्मक शैली, मनोवैज्ञानिक दृष्टि तथा शोध-आधारित प्रस्तुति का गहन विश्लेषण अपेक्षाकृत कम दिखाई देता है। साथ ही, शरतचन्द्र के जीवनानुभव और उनके रचनात्मक साहित्य के पारस्परिक संबंध को स्वतंत्र रूप से समझने वाले अध्ययनों की भी कमी है। हिन्दी जीवनी में 'उपन्यासात्मक जीवनी' जैसी मिश्रित विधा पर विमर्श भी सीमित है। इन शोध-अंतरालों को ध्यान में रखते हुए यह शोध-पत्र हिन्दी जीवनी परंपरा की समीक्षा करते हुए **'आवारा मसीहा'** के साहित्यिक महत्व की पुनर्स्थापना

का प्रयास करता है। हिंदी जीवनी लेखन की परम्परा को समझने से पहले जीवनी लेखन की भारतीय परंपरा का अवलोकन करना आवश्यक है|

भारतीय साहित्य परंपरा में जीवनी लेखन कोई आधुनिक विधा नहीं है, बल्कि इसका आधार अत्यंत प्राचीन और बहुस्तरीय है। आरंभिक भारतीय ग्रंथों में मनुष्य के जीवन को केवल ऐतिहासिक तथ्य के रूप में नहीं, बल्कि धर्म, नैतिकता और सांस्कृतिक स्मृति के वाहक के रूप में देखा गया। यही कारण है कि जीवनी का प्रारंभिक रूप अक्सर धार्मिक आख्यानों, मिथकीय चरित्रों और आदर्श पुरुषों के जीवन-चित्रण से मिलता है। यद्यपि इनका लक्ष्य आधुनिक अर्थों में तथ्यपरक जीवन-लेखन नहीं था, फिर भी व्यक्तित्व-केन्द्रित कथाओं की यह विरासत आगे चलकर जीवनी परंपरा की आधार-शिला बनती है। वैदिक साहित्य, उपनिषदों और प्रारंभिक दार्शनिक ग्रंथों में ऋषियों के जीवन-प्रसंग, संवाद और चरित्र-रूपांकन मिलने लगते हैं। उनमें किसी एक व्यक्ति का जीवन नहीं, बल्कि जीवन-दृष्टि महत्वपूर्ण होती है। रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य भी, भले ही पौराणिक हों, किंतु अपने नायकों राम, कृष्ण, अर्जुन, भीष्म आदि के चरित्र को जीवन-कथा के रूप में विकसित करते हैं। इसीलिए भारतीय साहित्य में जीवन-आधारित कथाओं की अनवरत परंपरा निरंतर चलती रही।

प्राचीन भारत में "चरित" शब्द स्वयं में एक स्वतंत्र साहित्यिक परंपरा बनाता है। राजतरंगिणी, हरिवंश, बौद्ध चरितों और जैन परंपरा के विभिन्न "चरितकाव्यों" में व्यक्तियों के जीवन और कर्म का विस्तृत वर्णन मिलता है। यह धारा तथ्यों का संयोजन करते हुए भी धार्मिक-नैतिक उद्देश्यों से संचालित थी। महाकाव्यों में नायक के जीवन की व्यापक यात्रा, संघर्ष और आदर्शों का रूपांकन जीवनी लेखन की नींव को और मजबूत करता है। पुराण प्रमुखतः देवों, राजाओं, ऋषियों और वंशों के जीवन-वृत्तांत प्रस्तुत करते हैं। इनमें तथ्य और कल्पना दोनों का मिश्रण है। साथ ही अशोक, समुद्रगुप्त, हर्ष आदि के अभिलेख तथा बाद के काल में लिखी गई राजतरंगिणी, अकबरनामा, बाबरनामा जैसे ऐतिहासिक ग्रंथ व्यक्तित्व-आधारित इतिहास को आगे बढ़ाते हैं। इन ग्रंथों में जीवन-तथ्यों को यथासंभव प्रमाणिक रूप में अंकित करने का प्रयास मिलता है।

मध्यकाल में जीवनी परंपरा नए रूप में सामने आती है। नाभादास की 'भक्तमाल' और उसकी विभिन्न टीकाएँ, संत-परंपरा से जुड़े अनेक भक्त-चरित जैसे कबीर, मीरा, रैदास, नानक आदि नैतिक और आध्यात्मिक उद्देश्य से रचित जीवन-लेखन का महत्वपूर्ण चरण हैं। यहाँ ऐतिहासिक सत्य से अधिक आध्यात्मिक अनुभव और लोक-विश्वासों को प्राथमिकता दी गई। उन्नीसवीं शताब्दी के आते-आते सामाजिक सुधार आंदोलनों और नवजागरण की पृष्ठभूमि में जीवनी अधिक तथ्यपरक, ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक होने लगी। आधुनिक शिक्षा और मुद्रण-प्रणाली ने जीवनी को एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा बनाने में योगदान दिया। इस समय महापुरुषों, स्वतंत्रता सेनानियों, साहित्यकारों और सामाजिक नेताओं की विस्तृत जीवनियां सामने आने लगीं। जीवनी की भाषा भी अधिक तर्कपूर्ण और शोधपरक हुई। भारतीय जीवनी परंपरा में आदर्शवादी जीवनी, आध्यात्मिक-जीवनी, ऐतिहासिक-जीवनी, आत्मकथात्मक-जीवनी तथा आधुनिक समय में "उपन्यासात्मक जीवनी" जैसी मिश्रित विधाएँ विकसित हुईं। इन रूपों में व्यक्ति के अंतरंग, सामाजिक संदर्भ, मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ और संघर्षों को अलग-अलग स्तर पर समझने का प्रयत्न मिलता है। इसलिए कहा जाता है कि **"उपन्यासात्मक जीवनी का उद्देश्य तथ्य को नष्ट करना नहीं, बल्कि उसे अधिक जीवंत और मानवीय बनाना है।"**[5] भारतीय जीवनी परंपरा की विशेषता यह है कि यहाँ तथ्य और कल्पना का संतुलित प्रयोग मिलता है। परंपरागत ग्रंथों में कल्पनाशीलता अधिक है, जबकि आधुनिक काल में तथ्य-सत्यापन को महत्त्व दिया गया। फिर भी रचनात्मकता को पूरी तरह नकारा नहीं गया। इसीलिए भारतीय जीवनी तर्क और संवेदना दोनों को साथ लेकर चलती है।

हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन का विकास: हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन एक महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा के रूप में विकसित हुआ है, जिसका उद्देश्य किसी व्यक्ति के जीवन-तथ्यों, अनुभवों, वैचारिक गठन तथा सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों को साहित्यिक संवेदना के साथ प्रस्तुत करना है। यह विधा केवल जीवन की

घटनाओं का विवरण नहीं देती, बल्कि व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसकी वैचारिक चेतना और उसके समय-समाज से बने संबंधों को भी अर्थपूर्ण रूप में उद्घाटित करती है। हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन का विकास साहित्यिक चेतना के विकास के साथ गहराई से जुड़ा हुआ रहा है। जैसे-जैसे साहित्य में व्यक्ति-केंद्रित दृष्टि, मानवीय संवेदना और यथार्थबोध को महत्व मिलता गया, वैसे-वैसे जीवनी लेखन भी अधिक परिष्कृत, विश्लेषणात्मक और साहित्यिक होता गया। इस संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र का यह कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि **"हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन का विकास साहित्यिक चेतना के विकास के साथ जुड़ा हुआ है, जहाँ व्यक्ति इतिहास का विषय न होकर साहित्य का केंद्र बन जाता है।"**[6] इसका उद्देश्य केवल जीवन की घटनाओं को कालक्रम में दर्ज करना नहीं होता, बल्कि व्यक्ति के जीवन-संघर्ष, आंतरिक द्वंद्व, प्रेरणाओं तथा उसके समय और समाज से बने जटिल संबंधों को अर्थपूर्ण ढंग से उद्घाटित करना भी होता है। इसी कारण जीवनी इतिहास और साहित्य दोनों के बीच एक सेतु का कार्य करती है, जहाँ एक ओर तथ्यात्मक प्रामाणिकता अपेक्षित होती है, वहीं दूसरी ओर साहित्यिक अभिव्यक्ति के माध्यम से जीवन के मानवीय और भावनात्मक पक्ष सामने आते हैं। इसलिए साहित्य के क्षेत्र में जीवनी विधा का महत्त्व इस बात में निहित है कि वह व्यक्ति के माध्यम से पूरे युग और समाज को समझने की दृष्टि प्रदान करती है। इसलिए यह कहना समीचीन है कि **"जीवनी विधा का महत्व इस बात में है कि वह व्यक्ति के जीवन के माध्यम से उसके युग, समाज और वैचारिक संघर्षों को उद्घाटित करती है।"**[7]

भारतीय नवजागरण का उदय आधुनिकता से गहरे रूप में जुड़ा हुआ है और इसी के साथ हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन को भी नई दिशा प्राप्त हुई। यद्यपि जीवनी लेखन की परंपरा भारतीय साहित्य में प्राचीन काल से विद्यमान रही है, पर आधुनिक अर्थों में वह जीवनी, जिसमें व्यक्ति की ऐतिहासिकता, मनोवैज्ञानिक संरचना और सामाजिक संदर्भों का विश्लेषण किया जाता है, हिन्दी साहित्य में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से व्यवस्थित रूप में दिखाई देने लगती है। यह वह समय था जब शिक्षा के प्रसार, मुद्रण-प्रणाली के विकास और आधुनिक विचारधाराओं के प्रभाव से साहित्य में व्यक्ति-केंद्रित दृष्टि को बल मिला। **"आधुनिक युग के साहित्य में जीवनी का उद्देश्य आदर्श-स्थापना नहीं, बल्कि जीवन-सत्य की खोज है।"**[8] हिन्दी जीवनी लेखन के इस विकास-क्रम को विभिन्न साहित्यिक युगों की प्रवृत्तियों के आधार पर समझना अधिक उपयुक्त है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के युग में हिन्दी साहित्य तीव्र सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों से गुजर रहा था। पश्चिमी शिक्षा, नवजागरण चेतना और पत्रकारिता के प्रभाव ने समाज में आत्मचिंतन और सुधार की भावना को प्रबल किया। इस वातावरण में व्यक्ति के जीवन और व्यक्तित्व के प्रति नई रुचि उत्पन्न हुई। यद्यपि इस युग में जीवनी लेखन अभी प्रारंभिक अवस्था में था, फिर भी इसके आधारभूत तत्त्व स्पष्ट रूप से विकसित होने लगे थे। भारतेंदु हरिश्चंद्र स्वयं अपनी रचनाओं में ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक चरित्रों के जीवन से जुड़े प्रसंगों को प्रस्तुत करते हैं, जिनमें व्यक्ति के सामाजिक दायित्व और नैतिक मूल्यों पर विशेष बल दिया गया है। इस काल में लिखी गई जीवनियाँ प्रायः प्रेरणात्मक स्वर लिए हुए थीं और उनका उद्देश्य समाज-सुधार, नैतिक चेतना के प्रसार तथा आदर्श व्यक्तित्वों की स्थापना करना था। यद्यपि इन जीवनियों में आधुनिक जीवनी की तरह गहन मनोवैज्ञानिक विश्लेषण नहीं मिलता, फिर भी उन्होंने हिन्दी साहित्य में जीवनी लेखन की दिशा निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी आधार पर आगे चलकर हिन्दी जीवनी लेखन अधिक तथ्यपरक, विश्लेषणात्मक और साहित्यिक रूप में विकसित हुआ।

द्विवेदी युग में महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकीय मार्गदर्शन में जीवनी-लेखन अधिक संगठित और उद्देश्यपूर्ण रूप में उभरता है। इस युग में व्यक्ति को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति प्रमुख रही। जीवनी का लक्ष्य जनमानस में नैतिक मूल्यों का जागरण और राष्ट्रीय चेतना का प्रसार था। ऐतिहासिक तथ्यों पर ध्यान तो था, पर आदर्शों की प्रतिष्ठा अधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती थी। दयानंद सरस्वती, विवेकानंद, तुलसीदास आदि पर लिखी गई जीवनियाँ इसी आदर्शवादी दृष्टि की प्रतिनिधि हैं। छायावादी युग तक आते-आते 'व्यक्ति' साहित्य का केंद्र बन गया। इस समय लिखी गई जीवनियों में मानसिक जीवन, भावनात्मक संघर्ष और आंतरिक जिजीविषा के

चित्र अधिक उभरकर आते हैं। यद्यपि छायावादियों ने प्रत्यक्ष रूप से जीवनियाँ कम लिखीं, पर उनकी लेखन-दृष्टि ने बाद की जीवनियों को मनोवैज्ञानिक गहराई प्रदान की।

स्वतंत्रता आंदोलन, आधुनिक शिक्षा और आलोचनात्मक चेतना के प्रसार ने हिन्दी जीवनी साहित्य को अभूतपूर्व विस्तार दिया। अब जीवनी केवल महापुरुषों तक सीमित नहीं रही, साहित्यकारों, समाज-सुधारकों, वैज्ञानिकों, कलाकारों और सामान्य जन तक इसका दायरा बढ़ा। इस दौरान अनेक शोधपरक, विस्तृत और प्रामाणिक जीवनियाँ सामने आईं। काशीप्रसाद जायसवाल, रामविलास शर्मा, अमृत राय, यशपाल, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी आदि ने जीवनी को नई साहित्यिक ऊँचाइयाँ प्रदान कीं। बीसवीं शताब्दी के मध्य में जीवनी लेखन में वैज्ञानिक और आलोचनात्मक दृष्टि विकसित हुई। अब जीवन का वर्णन मात्र सूचना नहीं, बल्कि विश्लेषण का विषय बन गया। साथ ही चरित्र-निर्माण में मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, इतिहास और संस्कृति सभी विषय क्षेत्रो का प्रयोग होने लगा। इसी काल में उपन्यासात्मक जीवनी और मनोवैज्ञानिक जीवनी जैसे रूप उभरते हैं। 'आवारा मसीहा', 'यामा', 'तुलसीदास', 'महात्मा गांधी' आदि जीवनियों ने इस युग की विश्लेषणात्मक परंपरा को मजबूत किया। इसी विश्लेषणात्मक परंपरा को मजबूत करने वाले जीवनियो में से एक **'आवारा मसीहा'** इस शोध पत्र का केद्र बिंदु है।

'आवारा मसीहा' का साहित्यिक महत्त्व: 'आवारा मसीहा' हिन्दी जीवनी साहित्य में उपन्यासात्मक जीवनी का सर्वाधिक सशक्त और प्रतिनिधि उदाहरण मानी जाती है। इसके लेखक **विष्णु प्रभाकर** ने इस कृति में बांग्ला साहित्य के महान उपन्यासकार **शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय** के जीवन को मात्र घटनाओं के क्रम में नहीं, बल्कि एक जीवंत मानवीय संघर्ष-कथा के रूप में रूपायित किया है। इसलिए लेखक का यह कथन अत्यंत सार्थक प्रतीत होता है कि **"शरतचन्द्र का जीवन स्वयं एक कथा था—संघर्ष, करुणा और विद्रोह से भरी हुई।"**[9] इस दृष्टि से **'आवारा मसीहा'** जीवनी और उपन्यास दोनों विधाओं के श्रेष्ठ तत्त्वों का संतुलित संयोजन प्रस्तुत करती है। **'आवारा मसीहा'** के महानायक अर्थात् शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय (1876–1938) आधुनिक भारतीय साहित्य के सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यासकारों में अग्रणीय हैं। बंगाल में जन्में शरतचन्द्र का जीवन आरंभ से ही संघर्षपूर्ण रहा। शरतचन्द्र के जीवनानुभवों का प्रभाव उनकी रचनाओं पर प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाई देता है। उनके पात्रों की मनःस्थिति में वही बेचैनी, संघर्ष, विद्रोह और संवेदनशीलता मिलती है जो स्वयं उनके जीवन में उपस्थित थी। जीवनी-लेखन के संदर्भ में शरतचन्द्र एक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं, क्योंकि उनके जीवन में संघर्ष, संवेदना, नाटकीयता और सामाजिक यथार्थ चारों तत्व स्वाभाविक रूप से उपस्थित हैं। यही कारण है कि विष्णु प्रभाकर द्वारा रचित **'आवारा मसीहा'** को हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ उपन्यासात्मक जीवनी माना जाता है। उपन्यासात्मक जीवनी का उद्देश्य तथ्यों को नकारना नहीं, बल्कि उन्हें अधिक मानवीय और प्रभावी बनाना होता है। इसी संदर्भ में स्पष्ट किया गया है कि **"उपन्यासात्मक जीवनी का उद्देश्य तथ्य को नष्ट करना नहीं, बल्कि उसे अधिक जीवंत और मानवीय बनाना है।"**[10] यह कृति केवल उनके जीवन का दस्तावेज़ नहीं, बल्कि उनके साहित्यिक व्यक्तित्व, मनोवैज्ञानिक संरचना और मानवीय दृष्टि को भी समझने का महत्वपूर्ण माध्यम है। शरतचन्द्र के व्यक्तित्व की बहुस्तरीयता संवेदनशीलता, विद्रोह, प्रेम, करुणा और मानवीय संघर्ष जीवनी-लेखन को साहित्यिक कृति में बदल देती है। उनके जीवन में नाटकीयता भी है और गहरी सामाजिक सच्चाई भी, इसलिए वे जीवनीकारों के लिए सदैव रोचक और चुनौतीपूर्ण विषय बने रहते हैं। शरतचन्द्र का जीवन और साहित्य एक-दूसरे के अत्यंत निकट हैं। उनका संपूर्ण लेखन मानवीय करुणा, स्त्री-चेतना और सामाजिक यथार्थ का सूक्ष्म चित्रण है। यही विशेषताएँ उन्हें जीवनी-लेखन में एक अद्वितीय व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करती हैं। 'आवारा मसीहा' जैसी जीवनी उनके जीवन और साहित्य के इस अंतर्संबंध को अत्यंत प्रभावी ढंग से सामने लाती है। शरतचन्द्र के संदर्भ में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि **"शरतचन्द्र के साहित्य को समझे बिना उनका जीवन अधूरा है और उनके जीवन को जाने बिना उनका साहित्य।"**[11]

इस कृति का साहित्यिक महत्त्व सर्वप्रथम इसकी सशक्त **उपन्यासात्मक संरचना** में निहित है, जो इसे पारंपरिक, विवरणात्मक जीवनी से भिन्न और विशिष्ट बनाती है। विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र के जीवन को घटनाओं की साधारण कालानुक्रमिक सूची के रूप में प्रस्तुत करने के स्थान पर उसे एक सतत और प्रवाहपूर्ण कथा के रूप में विन्यस्त किया है। जीवन के विभिन्न प्रसंग बाल्यावस्था की आर्थिक अभावग्रस्त स्थितियाँ, युवावस्था के तीव्र संघर्ष, बर्मा-प्रवास के अनुभव, दीर्घकालीन रोगग्रस्त जीवन और अंततः साहित्यिक प्रतिष्ठा—एक-दूसरे से इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि वे एक सजीव कथानक का रूप ग्रहण कर लेते हैं। इस कथात्मक विन्यास के कारण पाठक शरतचन्द्र के जीवन को केवल बौद्धिक स्तर पर नहीं समझता, बल्कि उसे भावनात्मक स्तर पर अनुभव भी करता है। विष्णु प्रभाकर ने पात्रों, परिवेश और जीवन-स्थितियों के सूक्ष्म चित्रण के माध्यम से शरतचन्द्र के जीवन-संघर्ष को जीवंत बना दिया है। इसमें स्पष्ट है कि लेखक की जीवनी-दृष्टि अत्यंत मानवीय और संवेदनशील है। वे जीवनीकार के रूप में लेखक से अधिक सहयात्री प्रतीत होते हैं। इसीलिए यह टिप्पणी महत्वपूर्ण है कि **"विष्णु प्रभाकर ने जीवनीकार के रूप में लेखक से अधिक एक संवेदनशील सहयात्री की भूमिका निभाई है।"**[12] परिणामस्वरूप पाठक को ऐसा प्रतीत होता है मानो वह शरतचन्द्र के जीवन-पथ पर स्वयं चल रहा हो। उनकी पीड़ा, आशा, विद्रोह और करुणा को भीतर तक महसूस कर रहा हो। कभी-कभी पाठक की दृष्टि आधुनिक जीवनी की उस अवधारणा से भी जुड़ जाती है जहाँ बाहरी घटनाओं की अपेक्षा आंतरिक यात्रा अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। अतः यह कथन यहाँ सार्थक प्रतीत होता है कि **"आधुनिक जीवनी में बाहरी घटनाओं से अधिक महत्व व्यक्ति की आंतरिक यात्रा को दिया जाता है।"**[13] यही उपन्यासात्मकता इस जीवनी को शुष्क तथ्यात्मक विवरण से ऊपर उठाकर एक प्रभावशाली और स्मरणीय साहित्यिक कृति में रूपांतरित करती है।

'आवारा मसीहा' की दूसरी प्रमुख विशेषता **तथ्य और कल्पना के संतुलित संयोजन** में निहित है, जो इस कृति को एक विश्वसनीय और साथ ही साहित्यिक रूप से प्रभावशाली जीवनी बनाता है। विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के जीवन को प्रस्तुत करते समय ऐतिहासिक तथ्यों, पत्रों, संस्मरणों, समकालीन संदर्भों और उपलब्ध दस्तावेज़ों को ठोस आधार के रूप में ग्रहण किया है। इससे कृति की प्रामाणिकता सुनिश्चित होती है और पाठक के मन में प्रस्तुत जीवन-विवरण के प्रति विश्वास उत्पन्न होता है। लेखक ने जीवन की प्रमुख घटनाओं, समय-क्रम और परिस्थितियों को तथ्यात्मक अनुशासन के साथ रखा है, जिससे जीवनी इतिहास-सम्मत भी बनी रहती है। इसके साथ ही, विष्णु प्रभाकर ने इस तथ्यात्मक ढांचे को केवल सूचनात्मक स्तर तक सीमित नहीं रहने दिया। उन्होंने संवाद-रचना, वातावरण-निर्माण और पात्रों की मनोवैज्ञानिक स्थितियों के चित्रण में सृजनात्मक कल्पना का सूक्ष्म और संतुलित प्रयोग किया है। इन कल्पनात्मक तत्त्वों के माध्यम से जीवन-प्रसंग अधिक जीवंत, संवेदनशील और प्रभावशाली बन जाते हैं। पाठक को शरतचन्द्र के संघर्ष, पीड़ा और संवेदना केवल ज्ञात ही नहीं होती, बल्कि वह उन्हें भीतर तक अनुभव करता है। महत्त्वपूर्ण यह है कि यह कल्पनाशीलता कभी भी तथ्यों को विकृत नहीं करती। लेखक की सृजनात्मकता तथ्यों के पूरक के रूप में कार्य करती है, न कि उनके स्थानापन्न के रूप में। इसी संतुलन के कारण 'आवारा मसीहा' न तो कल्पनाप्रधान उपन्यास बन जाती है और न ही शुष्क ऐतिहासिक दस्तावेज़। इसके विपरीत, यह तथ्य और कल्पना के मध्य एक सुसंगत साहित्यिक सामंजस्य स्थापित करती है, जो जीवनी को पठनीय, प्रभावशाली और अकादमिक रूप से मूल्यवान बनाता है।

कृति का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण साहित्यिक पक्ष इसकी **मनोवैज्ञानिक गहराई** है, जो 'आवारा मसीहा' को साधारण जीवनी से ऊपर उठाकर एक संवेदनशील साहित्यिक कृति का स्वरूप प्रदान करती है। विष्णु प्रभाकर ने **शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय** को केवल एक सफल और लोकप्रिय लेखक के रूप में प्रस्तुत नहीं किया है, बल्कि एक ऐसे मनुष्य के रूप में उभारा है, जो अपने समय की कठोर परिस्थितियों, सामाजिक उपेक्षा और आंतरिक संघर्षों से निरंतर जूझता रहा। लेखक की दृष्टि शरतचन्द्र के बाह्य जीवन-वृत्त तक सीमित न रहकर उनके अंतर्मन की जटिलताओं और भावनात्मक संवेदनाओं तक पहुँचती है। इस जीवनी में शरतचन्द्र के जीवन को

आकार देने वाले कारकों आर्थिक अभाव, पारिवारिक उत्तरदायित्व, सामाजिक अस्वीकृति और दीर्घकालीन रोग का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है। विष्णु प्रभाकर यह स्पष्ट करते हैं कि ये परिस्थितियाँ केवल शरतचन्द्र के जीवन की बाधाएँ नहीं थीं, बल्कि उनके व्यक्तित्व और रचनात्मक चेतना को गढ़ने वाली शक्तियाँ भी थीं। निरंतर अभाव और पीड़ा ने उनके भीतर करुणा, विद्रोह और मानवीय संवेदना को और गहरा किया, जो आगे चलकर उनकी रचनाओं की आत्मा बनी। लेखक इस तथ्य को रेखांकित करता है कि शरतचन्द्र की रचनात्मक संवेदना उनके निजी जीवन-संघर्षों से अलग नहीं थी। उनके उपन्यासों और कहानियों में दिखाई देने वाली स्त्री-पीड़ा, सामाजिक अन्याय और मानवीय करुणा सीधे उनके आत्मानुभवों से उपजी है। लेखक ने इस पर अपना विचार व्यक्त करते यह कहा है कि **"वास्तव में शरतचन्द्र का जीवन उस समाज का दस्तावेज़ है, जिसमें गरीबी, स्त्री-पीड़ा और सामाजिक अन्याय गहराई से उपस्थित थे।"**[14] इस प्रकार **'आवारा मसीहा'** में जीवन और साहित्य का मनोवैज्ञानिक अंतर्संबंध अत्यंत प्रभावी ढंग से स्थापित होता है। यही मनोवैज्ञानिक गहराई इस कृति को न केवल शरतचन्द्र के जीवन का दस्तावेज़ बनाती है, बल्कि उनके रचनात्मक व्यक्तित्व की गहन समझ भी प्रदान करती है।

'आवारा मसीहा' का साहित्यिक महत्त्व केवल उसकी उपन्यासात्मक संरचना और मनोवैज्ञानिक गहराई तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके सशक्त सामाजिक संदर्भ भी इसे एक विशिष्ट कृति बनाते हैं। यह जीवनी शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के व्यक्तिगत जीवन के माध्यम से उनके समय के समाज की विसंगतियों, पीड़ाओं और संघर्षों को उद्घाटित करती है। इस दृष्टि से '**आवारा मसीहा'** एक व्यक्ति की कथा न होकर एक पूरे युग का सामाजिक दस्तावेज़ बन जाती है। शरतचन्द्र का जीवन जिस सामाजिक परिवेश में आकार लेता है, वह औपनिवेशिक भारत का ऐसा समाज था जहाँ आर्थिक असमानता, वर्ग-विभाजन और स्त्री-शोषण गहरे रूप में विद्यमान थे। गरीबी, बेरोज़गारी और सामाजिक उपेक्षा उनके जीवन की स्थायी स्थितियाँ रहीं। विष्णु प्रभाकर ने इन परिस्थितियों को केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं रखा, बल्कि उन्हें शरतचन्द्र के व्यक्तित्व और दृष्टि के निर्माण में निर्णायक तत्व के रूप में प्रस्तुत किया है। इससे स्पष्ट होता है कि शरतचन्द्र की संवेदनशीलता और विद्रोही चेतना उनके निजी स्वभाव का परिणाम मात्र नहीं थी, बल्कि सामाजिक यथार्थ से उत्पन्न प्रतिक्रिया थी। कृति में स्त्री-पीड़ा का चित्रण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। शरतचन्द्र का साहित्य जिस करुणा और सहानुभूति के लिए जाना जाता है, उसका स्रोत उनके समाज में स्त्रियों की दयनीय स्थिति है। विष्णु प्रभाकर ने यह दिखाया है कि शरतचन्द्र का जीवन स्त्री-दुख से गहरे रूप में जुड़ा था। चाहे वह पारिवारिक अनुभव हों या समाज में देखी गई स्त्री-व्यथा। इस कारण 'आवारा मसीहा' में स्त्री-चेतना केवल साहित्यिक विषय न रहकर सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब बन जाती है।

वर्ग-संघर्ष भी इस जीवनी का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक पक्ष है। शरतचन्द्र का जीवन निम्न और मध्यवर्गीय संघर्षों से निरंतर टकराता रहा। आर्थिक अभाव और सामाजिक असमानता ने उन्हें समाज के हाशिए पर खड़े मनुष्यों के प्रति संवेदनशील बनाया। विष्णु प्रभाकर ने इन अनुभवों को शरतचन्द्र के जीवन के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि पाठक को तत्कालीन समाज की वर्गीय संरचना और उसके प्रभावों की स्पष्ट समझ मिलती है। इन सभी सामाजिक संदर्भों के कारण 'आवारा मसीहा' केवल शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय की जीवनी नहीं रह जाती, बल्कि अपने समय की मानवीय संवेदना, सामाजिक विषमता और करुणा का जीवंत दस्तावेज़ बन जाती है। विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र के जीवन को सामाजिक यथार्थ से जोड़कर यह सिद्ध किया है कि एक महान रचनाकार का जीवन और उसका समाज परस्पर गहरे रूप से संबद्ध होते हैं। इसी कारण 'आवारा मसीहा' व्यक्ति और युग—दोनों की संवेदनशील अभिव्यक्ति के रूप में अपना स्थायी साहित्यिक महत्त्व स्थापित करती है।

'आवारा मसीहा' की भाषा-शैली और वर्णन-प्रक्रिया इसका एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक पक्ष है, जो इस कृति को सामान्य जीवनी से ऊपर उठाकर एक प्रभावशाली साहित्यिक रचना बनाती है। विष्णु प्रभाकर की भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण और संवेदनात्मक है। उन्होंने ऐसी भाषा का चयन किया है जो न तो अत्यधिक अलंकृत है और न

ही शुष्क तथ्यात्मक, बल्कि जीवन की करुणा, संघर्ष और मानवीय संवेदना को स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त करती है। इसी कारण यह जीवनी विद्वानों के साथ-साथ सामान्य पाठकों के लिए भी समान रूप से पठनीय बनती है। कृति की भाषा में भावात्मकता और बौद्धिकता का संतुलन स्पष्ट दिखाई देता है। जहाँ शरतचन्द्र के जीवन-संघर्ष, आर्थिक अभाव और सामाजिक पीड़ा का वर्णन है, वहाँ भाषा सरल और संवेदनशील हो जाती है; वहीं साहित्यिक चेतना, सामाजिक विश्लेषण और विचारात्मक प्रसंगों में भाषा संयत, गंभीर और विचारोत्तेजक रूप ग्रहण कर लेती है। यह परिवर्तनशीलता भाषा को एकरस नहीं होने देती और पाठक की रुचि को निरंतर बनाए रखती है।

वर्णन-प्रक्रिया की दृष्टि से 'आवारा मसीहा' अत्यंत सशक्त कृति है। विष्णु प्रभाकर ने घटनाओं का विवरण मात्र सूचना के रूप में नहीं दिया, बल्कि उन्हें चित्रात्मक और अनुभवजन्य बनाया है। परिवेश-चित्रण, पात्रों की मनःस्थिति और सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि पाठक उस समय और वातावरण में स्वयं को उपस्थित अनुभव करता है। घर-परिवार, गाँव, नगर और बर्मा-प्रवास जैसे प्रसंगों में स्थान-वर्णन और वातावरण-निर्माण विशेष रूप से प्रभावशाली हैं। संवाद-प्रयोग भी कृति की वर्णन-प्रक्रिया को सजीव बनाता है। संवाद संक्षिप्त, स्वाभाविक और पात्रों के स्वभाव के अनुरूप हैं, जिससे कथा में गतिशीलता आती है। इसके अतिरिक्त लेखक कई स्थानों पर आत्मकथ्यात्मक और चिंतनशील शैली का प्रयोग करता है, जो जीवनी को वैचारिक गहराई प्रदान करता है। इस प्रकार **'आवारा मसीहा'** की भाषा-शैली और वर्णन-प्रक्रिया न केवल शरतचन्द्र के जीवन को जीवंत बनाती है, बल्कि जीवनी को एक संवेदनशील, प्रभावशाली और साहित्यिक कृति के रूप में प्रतिष्ठित भी करती है।

चरित्र-निर्माण की दृष्टि से '**आवारा मसीहा'** में **शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय** सबसे अधिक प्रभावशाली और केंद्रीय चरित्र के रूप में उभरते हैं। विष्णु प्रभाकर ने उन्हें केवल एक महान साहित्यकार के रूप में नहीं, बल्कि एक संघर्षशील, दयालु, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से परिपक्व और जीवन के प्रति अत्यंत ईमानदार मनुष्य के रूप में प्रस्तुत किया है। शरतचन्द्र का चरित्र निरंतर संघर्षों से निर्मित होता दिखाई देता है। आर्थिक अभाव, पारिवारिक दायित्व, सामाजिक उपेक्षा और शारीरिक रोगों के बीच भी उनका मानवीय विश्वास और करुणा अक्षुण्ण रहती है। लेखक ने उनके आंतरिक द्वंद्व, भावनात्मक संवेदनशीलता और विद्रोही चेतना को अत्यंत संतुलित और सूक्ष्म ढंग से उकेरा है, जिससे उनका व्यक्तित्व एक जीवंत और विश्वसनीय रूप ग्रहण करता है। शरतचन्द्र के साथ-साथ उनके परिवारजन, मित्र, साहित्यिक सहयोगी और समकालीन सामाजिक परिवेश के पात्र भी कृति में पर्याप्त विस्तार के साथ उपस्थित हैं। ये सहायक चरित्र केवल पृष्ठभूमि तक सीमित नहीं रहते, बल्कि शरतचन्द्र के व्यक्तित्व और रचनात्मक चेतना को समझने में सहायक बनते हैं। इनके माध्यम से लेखक तत्कालीन समाज की मानसिकता, साहित्यिक वातावरण और मानवीय संबंधों की जटिलताओं को भी स्पष्ट करता है। इसी कारण 'आवारा मसीहा' एक व्यक्ति-केन्द्रित कथा न रहकर एक व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य प्रस्तुत करती है और एक पूर्ण जीवनी का रूप ग्रहण करती है। अंततः, इस कृति की सबसे बड़ी शक्ति इसकी शोधपरकता और स्रोत-निष्ठा है। विष्णु प्रभाकर ने तथ्य-जाँच, ऐतिहासिक साक्ष्यों, पत्रों, संस्मरणों और उपलब्ध साहित्य का गहन अध्ययन कर इस जीवनी को रचा है। इसी शोध-निष्ठ दृष्टि के कारण **'आवारा मसीहा'** न केवल साहित्यिक रूप से प्रभावशाली बनती है, बल्कि अकादमिक दृष्टि से भी एक विश्वसनीय और प्रामाणिक जीवनी के रूप में स्थापित होती है।

निष्कर्षतः इस शोध से यह संभावित निष्कर्ष निकला कि भारतीय जीवनी परंपरा प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक काल के विविध स्रोतों से विकसित हुई है और इसमें ऐतिहासिकता, अध्यात्म, सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदनाओं का निरंतर संयोग दिखाई देता है। हिन्दी जीवनी-लेखन का आधुनिक रूप भारतेंदुयुग, द्विवेदीयुग और छायावाद के साथ क्रमशः विकसित होता गया और आगे चलकर तथ्यों, मनोविज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टि तथा कथा-शैली का समन्वय बनता गया। 'आवारा मसीहा' इस विकासक्रम में एक विशिष्ट पड़ाव है, जिसने

उपन्यासात्मक जीवनी को एक नई प्रतिष्ठा प्रदान की और यह प्रमाणित किया कि जीवनी केवल तथ्य-संग्रह नहीं, बल्कि जीवंत कथा-कला भी हो सकती है। यदि हिन्दी जीवनी परंपरा के विकास में **'आवारा मसीहा'** का योगदान का आंकलन किया जाए तो **'आवारा मसीहा'** ने हिन्दी में जीवनी को लोकप्रिय और साहित्यिक दोनों स्तरों पर नई दिशा दी। विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र के जीवन को तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत किया, लेकिन उसे उपन्यासात्मक संरचना, संवादों, मनोवैज्ञानिक व्याख्याओं और सामाजिक परिप्रेक्ष्य के माध्यम से अधिक जीवंत बना दिया। इससे स्पष्ट हुआ कि जीवनी का उद्देश्य केवल चरित्र के जीवन-तथ्य बताना नहीं है, बल्कि उसे एक मानवीय अनुभव-यात्रा के रूप में सामने लाना भी है। यह कृति हिन्दी जीवनी में कथा-कला की शक्ति और शोध-निष्ठता के संतुलन का उत्कृष्ट उदाहरण बनी। इससे उपन्यासात्मक जीवनी का महत्व और स्वीकार्यता बढ़ी तथा हिंदी में इस विधा के लिए संभावनाओं के नए द्वार खुले।

समग्रतः कहा जा सकता है कि **'आवारा मसीहा'** न केवल शरतचन्द्र के जीवन को समझने की एक महत्वपूर्ण कड़ी है, बल्कि हिन्दी जीवनी साहित्य की विकास-धारा में भी एक निर्णायक योगदान है। यह कृति यह भी संकेत करती है कि साहित्यिकता और तथ्यपरकता के संतुलन से जीवनी को अधिक आकर्षक, प्रभावशाली और अकादमिक रूप से उपयोगी बनाया जा सकता है। अतः **"हिन्दी में जीवनी लेखन की परंपरा और आवारा मसीहा का साहित्यिक महत्व"** दोनों संदर्भों में यह कृति एक सेतु की तरह कार्य करती है, जो अतीत के अनुभव, वर्तमान की आलोचना और भविष्य की संभावनाओं को जोड़ती है। जीवनी लिखने की इच्छा रखने वाले एक बार आवारा मसीह के पहले संस्करण की भूमिका अवश्य ही पढ़े और जाने की क्यों इस जीवनी को लिखने में 14 वर्ष लग गए। यह कही न कही हिंदी जगत के लिए एक वरदान ही है कि हिंदी जीवनी साहित्य में एक ऐसी जीवनी हमारे पास है जो आजीवन सभी को मार्गदर्शन देता रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. प्रभाकर, विष्णु, आवारा मसीहा, नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।
2. प्रभाकर, विष्णु, आवारा मसीहा, नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।
3. संचारिका पत्रिका, जुलाई अंक (2013)।
4. मिश्र, डॉ. विश्वनाथ गुप्त एवं डॉ. कृष्णचन्द्र, विष्णु प्रभाकर, नई दिल्ली : साहित्य अकादमी।
5. प्रभाकर, विष्णु, आवारा मसीहा, नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।
6. नगेन्द्र, डॉ. (सं.), हिन्दी साहित्य का इतिहास, नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
7. नगेन्द्र, डॉ. (सं.), हिन्दी साहित्य का इतिहास, नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
8. संचेतना पत्रिका, जून अंक (2009)।
9. प्रभाकर, विष्णु. आवारा मसीहा. नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।
10. मिश्र, डॉ. विश्वनाथ गुप्त एवं डॉ. कृष्णचन्द्र, विष्णु प्रभाकर, नई दिल्ली : साहित्य अकादमी।
11. प्रभाकर, विष्णु, आवारा मसीहा, नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।
12. मिश्र, डॉ. विश्वनाथ गुप्त एवं डॉ. कृष्णचन्द्र, विष्णु प्रभाकर, नई दिल्ली : साहित्य अकादमी।
13. सिंघल, डॉ. शशिभूषण, साहित्य विधाएँ, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
14. प्रभाकर, विष्णु, आवारा मसीहा, नई दिल्ली : राजपाल एंड सन्स।

•